लाटी (कहानी)

लम्बे देवदारों का झुरमुट झक-झुककर गेठिया सैनेटोरियम की बलैया-सी ले रहा था। काँच की खिड़कियों पर सूरज की आड़ी-तिरछी किरणें मरीज़ों के क्लांत चेहरों पर पड़कर उन्हें उठा देती थीं। मौत की नगरी के मुसाफिरों के रोग-जीर्ण पीले चेहरे सुबह की मीठी धूप में क्षण-भर को खिल उठते। आज टी.बी., सिरदर्द और जुकाम-खाँसी की तरह आसानी से जीती जानेवाली बीमारी है, पर आज से कोई बीस साल पहले टी.बी. मृत्यु का जीवंत आह्वान थी। भुवाली से भी अधिक माँग तब गेठिया सैनेटोरियम की थी। काठगोदाम से कुछ ही मील दूर एक ऊँचे पहाड़ पर गेठिया सैनेटोरियम के लाल-लाल-छतों के बँगले छोटे-छोटे गुलदस्ते से सजे थे। तीन नम्बर के बँगले का दुगुना किराया देकर कप्तान जोशी स्वयं अपनी रोगिणी पत्नी के साथ रहता था। बँगले के बरामदे में पत्नी के पलँग के पास वह दिन-भर आराम-कुर्सी डाले बैठा रहता, कभी अपने हाथों से टेम्परेचर चार्ट भरता और कभी समय देख-देखकर दवाईयाँ देता। पास के बँगले के मरीज़ बड़ी तृष्णा और चाव से उनकी कबूतर-सी जोड़ी को देखते। ऐसी घातक बीमारी में कितने यत्न और स्नेह से सेवा करता था कप्तान जोशी! कभी उसके आनन्दित चेहरे पर झुँझलाहट या खीझ की अस्पष्ट रेखा भी नहीं उभरती। कभी वह घुँघराले बालों को ब्रुश से सँवारता, बड़े ही मीठे स्वर में पहाड़ी झोड़े गाता, जिनकी मिठास में तिब्बती बकरियों के गले में बँधी, बजती-रुनकती घंटियों

की-सी छुनक रहती। पहाड़ी मरीज़ बिस्तरों से पुकार कर कहते, "वाह कप्तान साहब, एक और!"

कप्तान अपने पलंग से घुली-मिली सुन्दरी 'बानो' की ओर देख बड़े लाड़ से मुस्कुरा देता। बानो का गोरा चेहरा बीमारी से एकदम पीला पड़ गया था और उसकी बड़ी-बड़ी आँखें और बड़ी-बड़ी हो गयी थीं। शान्त तरल दृष्टि से वह कप्तान को दिन-रात टुकुर-टुकुर देखती रहती। विवाह के दो वर्ष पश्चात यही उनका वास्तविक हनीमून था, जहाँ न अम्मा, चाची और ताई की शासन की लगाम थी, न नई बहू के घूँघट की बन्दिश। पिंजड़े की चिड़िया आज़ाद कर दी गई थी किन्तु अब उसके कमज़ोर डैनों में उड़ने की ताकत नहीं थी। कप्तान उसकी दुर्बल तप्त हथेली को अपनी कसरती मुट्ठी में बड़े प्यार से दबाकर सहलाने लगता तो उसकी सींक-सी कलाई की सोने की चूड़ी सर-सर कर कोहनी तक सरक जाती।

उन दिनों गेठिया का डॉक्टर एक अधेड़ स्विस था। एक दिन उसने कप्तान को अकेले में बुलाकर कहा, "कप्तान, तुम अभी जवान हो, यह बीमारी जवानी की भूखी है। मैं देख रहा हूँ, तुम ज़रा भी परहेज़ नहीं बरतते। मरीज़ की भूख को दवा से जीतना होगा, मुहब्बत से नहीं।" क्षण-भर को सब समझकर कप्तान लाल पड़ गया। उसके बूढ़े पिता के भी कई पत्र आ चुके थे और माँ ने रो-रोकर चिट्ठियाँ डाल दी थीं, "मेरे दस-बीस पूत नहीं हैं बेटा, यह बीमारी सत्यानाशी है" – पर कप्तान पहले की तरह अलमस्त डोलता, कभी बानो के चिकने केशों को चूमता, कभी

उसकी रेशमी पलकों को, कभी पास के प्राइवेट वार्ड की, गुमानसिंह मालदार की गोल-मटोल पत्नी से मज़ाक करता।

सैनेटोरियम की मनहूस ज़िन्दगी के काले आकाश में रोबदार ठकुरानी ही एक मात्र द्युतिमान तारिका थी। भरे-भरे हाथ-पैर की, चिकने चेहरे पर सदा मुस्कान बिखेरती वह पूरे सैनेटोरियम की भाभी थी। उसके स्वास्थ्य के दुर्गम दुर्ग में भी न जाने बीमारी का घुन किस अरक्षित छिद्र से प्रवेश पा गया था। टी.बी. लगने की पीड़ा से कराहती वह अपनी कदर्य गालियों का अक्षय भण्डार खोल देती। कभी लक्षपति श्वसुर को लक्ष्य बनाती, "हैं हमारे 'बुडज्यू' आधी कुमाऊँ के छत्रपति, पर बहू तीथांण (श्मशान) को जा रही है तो उनकी बला से! दुम उठाकर जिसे देखा, वही बदज़ात नर से मादा निकला।"

"ए शाब्बाश, क्या पंच के स्टैण्डर्ड का सेंस ऑफ़ ह्यूमर है! भाभी तबियत बाग-बाग कर दी।" कप्तान कहता। "एक मेरा खसम है साला। पी के धुत होगा किसी गोरी मेम को लेकर। दो महीने से हरामी झाँकने भी नहीं आया। दाढ़ीजारे की अर्थी उठेगी तो मज़ाल मैं भी सुहाग उताऊँ।" वह फिर कहती।

"क्यों भाभी, क्यों कोस रही हो?" कप्तान हँसकर कहता। प्रौढ़ा नेपाली भाभी की सदाबहार हँसी से खिलखिलाती आँखें छलक उठतीं, "शाबास है, कप्तान बेटा, तुझे देखकर मेरी छातियों में दूध उतर आता है। कैसी सेवा कर रहा है तू, और एक हमारे हैं कुतिया के जने! मिले तो मूँछें उखाड़कर हरामी के मुँह में ठूँस दूँ।"कप्तान हँसते-हँसते दुहरा हो जाता, मूँछें उखाड़कर मुँह में

ठूँसने की बात कुछ ऐसी जम जाती कि वह भागकर बानो को सुना आता। नेपाली भाभी के पति की असंख्य मोटरें अल्मोड़ा-नैनीताल को घेरे रहतीं, चाय के बगीचों का अंत नहीं था; किन्तु उनके वैभव ने पत्नी के प्रति प्रेम और मोह की बेड़ियाँ काट दी थीं। एक वर्ष से वे एक बार भी उसे देखने नहीं आए। एक दिन कप्तान ने देखा, नेपाली भाभी की खाँसी बहुत ही बढ़ गयी है, खाँसी का दौरा-सा पड़ा और कप्तान भागकर देखने गया तो देखा, रक्त के कुंड के बीच नेपाली भाभी की विराट गेहुँआ देह निष्प्राण पड़ी थी। पति की मूँछों को उसके मुँह में ठूँसने का स्वप्न अधूरा ही छोड़कर भाभी चली गई थी।

कुछ दिन तक कप्तान उदास हो गया। बानो की बड़ी-बड़ी आँखों में भी उदासी के डोरे पड़ गए। जब ऐसी हँसती-खेलती लाल-लाल भाभी को मौत खींच ले गई तो हड्डियों का ढाँचा मात्र बानो तो हवा में उड़ती रुई का फाहा थी। भाभी की मौत आकर जैसे उन दोनों के कान में कह गई थी कि ज़िन्दगी कुछ ही पलों की है। उन अमूल्य पलों के अमृतस्वरूपी रस की अन्तिम बूँद भी उन दोनों को छोड़ना मंजूर न था। नित्य निकट आती मौत ने बानो को चिड़चिड़ा बना दिया, पर जैसे इकलौते ज़िद्दी दुर्बल बालक की हर ज़िद को स्नेहमयी माता हँस-खेलकर झेल लेती है, वैसे ही कप्तान हठीली बानो की हर ज़िद पूरी करता। कभी वह खिली चाँदनी में बाहर जाने को मचलती तो वह अपने खाकी ओवरकोट में उसे लपेटकर अपनी देह से सटाए लम्बे चीड़ की छाया में बैठा रहता।

बानो को विवाह के ठीक तीसरे ही दिन छोड़कर उसे बसरा जाना पड़ा था। उन तीन दिनों में, खाकी वर्दी में कसे छह-फूटे शरीर और भूरी-भूरी मूँछों को देखकर, बानो उससे जितना ही कटी-कटी छिपी फिरती, वह उसे पाने को उतना ही उन्मत्त हो उठता। उसे देखते ही वह अपनी मेहँदी लगी नाजुक हथेलियों से लाज से गुलाबी चेहरा ढाँक लेती। दूसरे दिन बड़ी कठिनता से कप्तान उसके मुँह से धीमी फुसफुसाहट में उसका नाम कहलवा पाया था, बहुत धीमे स्वर में ही प्रणय-निवेदन की भूमिका बाँधनी पड़ी थी; क्योंकि पास के कमरे में ही ताऊजी लेटते थे।

“क्या नाम है तुम्हारा?” उसकी तीखी ठुड्डी उठाकर कप्तान ने पूछा था।

“बानो।” उसके पतले होंठ हिलकर रह गए।

“राम-राम, मुसलमानी नाम।” कप्तान ने हँसकर छेड़ दिया।

“सब यही कहते हैं, मैं क्या करूँ?” बानो की आँखें छलक उठीं।

“मैं तो तुम्हें छेड़ रहा था, कितना प्यारा नाम है! पहाड़ी नाम भी कोई नाम होते हैं भला, सरुली, परुली, रमा, खष्टी।” वह बोला, “कितने साल की हो तुम, बानो?” “इस आषाढ़ में मुझे सोलहवाँ लगेगा।” बानो ऐसे उत्साह से बोली जैसे उसने आधी ज़िन्दगी पार कर ली हो। कप्तान का दिल भर आया, अपनी खिलौने-सी बहू को उसने खींचकर हृदय से लगा लिया। पहले वह अपने ताऊ और पिता से सख़्त नाराज़ हो गया था, कहाँ वह ठसकेदार

बाँका कप्तान और कहाँ हाईस्कूल पास छोकरी को पल्ले बाँधकर रख दिया! पर बालिका बानो की सरल आँखों का जादू उस पर चल गया। तीसरे दिन ही उसे बसरा जाना था। कप्तान बानो से विदा लेने गया तो वह कोने में बैठी छालियाँ कतर रही थी, उसकी पलकें भीगी थीं और पति की आहट पाकर उसने घुटनों में सिर डाल दिया। झट से झुककर कप्तान ने उसका माथा चूम लिया। उसका गला भर आया।

तीन-दिन की ताजा सुन्दरी नववधू को इस तरह छोड़कर जाना कप्तान को दुश्मन की गोलाबारी से भयंकर लगा। इसके बाद दो वर्षों तक कप्तान युद्ध की विभीषिका में भटक गया। बर्मा और बसरा के जंगलों में भटक-भटककर उसके साथी वहशी बन गए थे। गंदे अश्लील मज़ाक करते। फौजी अफसरों में कप्तान ही सबसे छोटी उम्र का था। बर्मा के युद्ध से स्तब्ध सड़कों पर चपल बर्मी रमणियों के कुटिल कटाक्षों का अभाव नहीं था, फिर भी कप्तान अपनी जवानी को दाँतों के बीच जीभ-सी बचाता सेंत गया।

दो साल बाद घर पहुँचा तो दुनिया बदल चुकी थी। उन दो वर्षों में बानो ने सात-सात ननदों के ताने सुने, भतीजों के कपड़े धोए, ससुर के होज बिने, पहाड़ की नुकीली छतों पर पाँच-पाँच सेर उड़द पीस कर बड़ियाँ तोड़ीं। कभी सुनती उसके पति को जापानियों ने कैद कर लिया है, अब वह कभी नहीं लौटेगा। सास और चचिया सास के व्यंग्य-बाण उसे छेद देते, वह घुलती गयी और एक दिन क्षय का तक्षक कुंडली मारकर उसकी नन्ही-सी छाती पर बैठ गया। उसे सैनेटोरियम भेज दिया गया

था। दूसरे ही दिन कप्तान बानो को देखने चल दिया तो घरवालों के चेहरे लटक गए। गेठिया पहुँचा और एक प्राइवेट वार्ड के बरामदे में लेटी बानो को देखकर उसका कलेजा उछलकर मुँह को आ गया। दो वर्षों में बानो घिसकर और भी बच्ची बन गई थी। कप्तान को देखकर उसकी तरल आँखें खुली ही रह गईं, फिर आँसू टपकने लगे। कहने और कैफियत देने की कोई गुंजाइश नहीं रही। बानो के बहते आँसुओं की धारा ने दो साल के सारे उलाहने सुना दिए। दोनों ने समझ लिया कि मिलन के वे क्षण मुट्ठी-भर ही रह गए थे।

उन दिनों सैनेटोरियम में एक अत्यंत क्रूर नियम था। रोगियों को उनकी अन्तिम अवस्था जानकार उन्हें घर भेज दिया जाता। सैनेटोरियम में मृत्यु का प्रवेश सर्वथा निषिद्ध था। नेपाली भाभी की मृत्यु के बाद कप्तान और बानो मातम में डूब गए, पर चौथे दिन वे फिर हनीमून मनाने लगे। अपनी साड़ियों का बक्स निकलवाकर बानो ने कई साड़ियों पर इस्त्री करवाई। बड़ी देर तक दोनों ने पेशेन्स खेला, पर शाम होते ही बानो मुरझाने लगी। दिन-भर उसे दस्त आ रहे थे और टी.बी. के मरीज़ को दस्त आना खतरे से खली नहीं होता। डॉक्टर दलाल आया, उसने कप्तान को बाहर ले जाकर कमरा खाली करवाने का नोटिस दे दिया, "कल ही ले जाना होगा, आई गिव हर टू टु-थ्री डेज़। इससे ज़्यादा नहीं बचेगी।" कप्तान का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। घर जाने का प्रश्न नहीं उठता था, तीन रस-भरे महीनों की मीठी धरोहर को वह घर की कड़वाहट से अछूता ही रखना चाहता था। भुवाली के पास ही एक चाय की दूकान के नीचे

साफ़-सुथरा कमरा, मृत्यु का पासपोर्ट पाए बानो-जैसे अभागे मरीज़ों के लिए सदा बाँह फैलाए खुला रहता था।

"सैनेटोरियम छोड़कर हम कल दूसरी जगह चलेंगे, बानो। यहाँ साली तबियत बोर हो गई है।" बड़े उत्साह और आनन्द से कप्तान ने भूमिका बाँधी, पर बानो का चेहरा फक पड़ गया। वह समझ गई कि आज उसे भी नोटिस दे दिया गया है। बड़ी रात तक कप्तान उसके गालों के पास अपना चेहरा ले जाकर गुनगुनाता रहा, "बानो, मेरी बन्नी, बन्नू!" और फिर जब बानो को नींद आ गई तो वह भी अपने पलंग पर जाकर सो गया। सुबह उठा तो बानो पलंग पर नहीं थी। सोचा, घिसटती बाथरूम तक चली गई होगी। जोश आने पर वह काफी दूर तक चल लेती थी। बड़ी देर तक नहीं लौटी तो वह घबराकर उठा। बानो कहीं नहीं थी। भागकर वह मरीज़ों के पास गया, डॉक्टर आया, नर्सें आईं, चौकीदार आया, पर बानो कहीं नहीं थी। सैनेटोरियम में आज पहली बार ऐसी अनहोनी घटना घटी थी। दूसरे दिन बड़ी दूर रती घाट पर बानो की साड़ी मिली थी। मृत्यु के आने से पूर्व वह अभागी स्वयं ही भागकर मृत्यु से मिलने चली गई थी।

इसमें कोई सन्देह नहीं रहा कि बानो ने डूबकर आत्महत्या कर ली थी। शोक से पागल होकर कप्तान उसकी साड़ी को छाती से चिपटाए फिरता रहा; किन्तु मर्द की जवानी जाड़े की भयंकर लम्बी रात के समान है, जो काटे नहीं कटती। एक ही साल में उसका फिर विवाह हुआ, अब के ताऊ और पिता ने खूब ठोंक-पीट कर बहू छाँटी। ऊँची-अगली, गोरी और एम.ए. पास।

कप्तान की नई पत्नी के पिता थे मेज़र जनरल। चालीस तमगे लगाकर उन्होंने कन्यादान किया तो कप्तान बेचारा सहम कर रह गया। प्रभा इकलौती लड़की थी, फिर दुजू की बीवी थी, जो बादशाह की घोड़ी से कम नहीं होती। उसके सौ-सौ नखरे उठाता कप्तान हँसना, खिलखिलाना और मौज़-मस्तियाँ सब भूलकर रह गया। चार साल में कप्तान को दो बेटे और एक बेटी देकर प्रभा ने धन-संचय की ओर ध्यान लगाया। सोलह सालों में कप्तान के बैंक बैलेंस में रुपयों और नोटों की मोटी तह जमाकर दोनों नैनीताल घूमने आए। कप्तान की थोड़ी सी तोंद निकल आई थी, चेहरा अभी भी मस्ताना था, पर मूँछों में अब वह ऐंठ नहीं रह गई थी, कनपटी के आस-पास बाल सफेद हो चले थे। दो जवान लड़कों को कमीशन मिल गया था, बेटी मिरांडा हाउस में पढ़ रही थी।

नैनीताल आकर कप्तान के दिल में एक टीस-सी उठी। काठगोदाम से चलकर गेठिया दिखा और वह गुमसुम-सा हो गया। नैनीताल के ग्रांड होटल में दोनों टिके। प्रभा बोली, "चलो डार्लिंग, पहाड़ का इंटीरियर घूमा जाए। भुवाली चलें।" चिकन, सैंडविच, रोस्ट मुर्ग पैक करवाकर उसने अपनी फियट गाड़ी भुवाली की ओर छोड़ी। बगल में दामी चंदेरी साड़ी और बिना बाँहों के ब्लाउज़ से अपने मांसल शरीर की गोरी दमक बिखेरती प्रभा बैठी। भुवाली की एक छोटी-सी दुकान देखकर प्रभा ने गाड़ी रुकवा दी, "इसी दुकान में आज एकदम पहाड़ी स्टाइल से कलई के गिलास में चाय पिएँगे हनी।" वह बोली।

कप्तान अब मेज़र था, “मेज़र की डिग्निटी कहाँ जाएगी?” वह बोला।

“भाड़ में!” कहकर प्रभा अपनी पेंसिल हील की जूतियाँ चटकाती दुकान में घुस गई।

काठ की एक बेंच धुएँ और कालिख से काली पड़ गई थी, उसी को झाड़कर दोनों बैठ गए। पहले कुछ देर को पहाड़ी दुकानदार भौंचक-सा रह गया। लकड़ी के धुएँ से एकदम काली केटली में चाय उबल रही थी।

“खूब गर्म दो गिलास चाय लाओ, प्रधान।” मेज़र ने पहाड़ी में कहा और दुकानदार का मुँह खुला ही रह गया। ऐसे अंग्रेज़ी में बोलनेवाला अनोखा जोड़ा पहाड़ी कैसे हो गया, वह सोचने लगा।

वह चाय बना ही रहा था कि अलख अगोचर करते वैष्णवियों के दल ने भीतर घुसकर दुकान घेर ली, “ओ हो गुरू, भल द्दा भल द्दा।” कहकर हेड वैष्णवी ने बड़े प्रभुत्वपूर्ण स्वर में सोलह गिलास चाय का आर्डर दे दिया। हेड वैष्णवी बड़ी ही मुखर और मर्दानी थी, इसी से शायद मर्दाने स्वर में बोल भी रही थी, “सोचा, बामण ज्यू की ही दुकान की चाय छोरियों को पिलाऊँगी, आज एकादशी है।”

“क्यों नहीं! क्यों नहीं!” दुकानदार बोला, “अरे लाटी भी आई है?”

“अरे कहाँ जाएगी अभागी!” वैष्णवी ने कहा। प्रभा और मेज़र की दृष्टि एक साथ ही लाटी पर पड़ी।

कुत्सित बूढ़ी अधेड़ वैष्णवियों के बीच देवांगना-सी सुन्दरी लाटी अपनी दाड़िम-सी दन्तपंक्ति दिखाकर हँस दी। मेज़र का शरीर सुन्न पड़ गया, स्वस्थ होकर जैसे साक्षात् बानो ही बैठी थी। गालों पर स्वास्थ्य की लालिमा थी, कान तक फैली आँखों में वही तरल स्निग्धता थी और गूँगी जिह्वा का गूँगापन चेहरे पर फैलकर उसे और भी भोला बना रहा था। “हाय, क्या यह गूँगी है? माई गॉड, ह्वाट ब्यूटी।” प्रभा बोली।

“हाँ सरकार, यह लाटी है।”, दुकानदार ने कहा और मेज़र के दिल पर आ गिरी भारी पत्थर की चट्टान उठ गई।

“क्या नाम है जी इसका?” प्रभा मुग्ध होकर लाटी को ही देख रही थी।

“नाम जो होगा, वह तो बह गया मीमशाब, अब तो लाटी ही इसका नाम है।” हेड वैष्णवी ने कहा, “हमारे गुरू महाराज को इसकी देह नदी में तैरती मिली। जीभड़ी इसकी कटकर कहीं गिर गई थी। राम जाने कौन था वह! गले में चरयो (मंगल-सूत्र) था, ब्याह हो गया होगा। फिर हमारा गुरू महाराज इसको गुरूमंतर दिया। भयंकर ‘छे रोग’ था। एक-एक सेर खून उगलता था, पर गुरू का शरण में आया तो सब रोग-सोग ठीक हो गया इसका। लाटी, जीभ दिखा।

धुँ-धुँ कर लाटी ने भुवनमोहिनी हँसी हँस दी, जीभ नहीं दिखाई।

“कुछ नहीं समझती साली। बस खाती है ढाई सेर, सब भूल गया, हमारा आर्डर भी नहीं मानती।” असंतुष्ट स्वर में मर्दानी वैष्णवी बोली।

“ओह, माई गॉड! अपने आदमी को भी भूल गई क्या?” प्रभा बोली।

“जो था सो था, इसको कुछ याद नहीं। खाली ‘फिक-फिक’ कर हँसती है हरामी। अब परभू इसका मालिक और परभू इसका सहारा है।

हाँ, गुरू कितना पैसा हुआ?”

हेड वैष्णवी ने पैसे चुकाए और उसका दल अगोचर अलख बजता उठ खड़ा हुआ। लाटी बैठी ही रही, मेज़र एकटक उसे देख रहा था। यह वही बानो थी, जिसे डॉक्टर दलाल और कक्कड़ जैसे प्रसिद्ध विशेषज्ञों की मृत्युंजय औषधियाँ भी स्वस्थ नहीं कर सकी थीं।

“उठ साली लाटी!” हेड वैष्णवी ने हलकी-सी ठोकर से लाटी को उठाया। एक बार फिर अपनी मधुर हँसी से मेज़र का हृदय बींधकर लाटी उठी और दल के पीछे-पीछे चल दी।

काश, उसके भोले चेहरे से गाल सटाकर मेज़र कह सकता, ‘मेरी बानो, बन्नी, बन्नू!’ शायद उसकी गूँगी ज़बान के नीचे दबी उसकी गूँगी पिछली ज़िन्दगी बोल उठती।

पर मेज़र, ज़िन्दगी की दौड़ में बहुत आगे निकल आया था, पीछे लौटकर बिछुड़े को लाना सबसे बड़ी मूर्खता होती। दो जवान बेटे और बेटी, राष्ट्रपति के सहभोजों में चमकती उसकी शानदार दूसरी बीवी, गरीब, गूँगी लाटी का आना कैसे सह सकते?

“उठो डार्लिंग, लंच गरम पानी में करेंगे।” प्रभा ने कहा और मेज़र उठ खड़ा हुआ। कुछ ही पलों में वह बूढ़ा और खोखला हो गया था।

बानो मर गई थी। अब तो वह लाटी थी। प्रभु अब उसका मालिक और प्रभु ही उसका सहारा था।